Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 8 | ISSUE : 10 | OCTOBER 2022

'परशुरामोदयम् महाकाव्यम्' की नायिका 'सत्यवती' की चारित्रिक विशेषताओं का विवेचन

डॉ. बलवन्त सिंह चौहान [1] | संगीता कुमारी सैनी [2]

[1] एसोसिएट प्रोफेसर एवं शोध निर्देशक (संस्कृत), डॉ. भीमराव अम्बेडकर राजकीय महाविद्यालय, श्रीमङ्गानगर (राज.)

[2] शोधच्छात्रा (संस्कृत), डॉ. भीमराव अम्बेडकर राजकीय महाविद्यालय, श्रीगङ्गानगर (राज.)

ABSTRACT:

आधुनिक संस्कृत महाकाव्यों की परम्परा में हरियाणा प्रान्त के प्रो. सुधीकान्त भारद्वाज 'कल्प' प्रणीत 'परशुरामोदयम् महाकाव्यम्' अपने प्रतिपाद्य एवं कलात्मक वैशिष्ट्य के फलस्वरूप संस्कृत के नवीन अध्येताओं के लिए आदर्श प्रतिमान के रूप में प्रतिष्ठित है। कवि ने लोकविश्रुत पौराणिक आख्यान के आधार पर भगवान् श्रीविष्णु के छठे अवतार के रूप में अक्षय तृतीया को अवतरित हुए भृगुकुल शिरोमणि परशुराम के जन्म की कथा को जनमानस तक पहुँचाने के लिए 'परशुरामोदयम् महाकाव्यम्' का प्रणयन किया। शृङ्गाररस प्रधान इस महाकाव्य में परशुराम जन्म से पूर्व की कथा को बड़े ही रोचक एवं विविधतापूर्ण ढंग से विवेचित किया गया है। सग्रह सर्गीय इस विशाल महाकाव्य के नायक के रूप में परशुराम के पितामह ऋचीक ऋषि को प्रतिष्ठित करते हुए नायिका की भूमिका में राजा गाधि की पुत्री सत्यवती के चरित्र को चित्रित किया गया है। भृगु पुत्र ऋचीक की तपस्या के फल रूप में भगवान विष्णु स्वयं उनके पौत्र के रूप में पृथ्वी पर अवतरित हुए और परशुराम नाम से जगत् में प्रसिद्ध हुए। महाकाव्य की नायिका सत्यवती अनेक मानवीय गुणों से विभूषित होकर महाकाव्य में प्राचीनकाल की भारतीय नारी का दिग्दर्शन करवाती हैं। सत्यवती ऋचीक ऋषि की प्रेमिका और पत्नी के बाद एक आदर्श गृहिणी के रूप में महाकाव्य में उभरकर आई हैं। गधि राजकुमारी सत्यवती सौन्दर्ययुक्त विनम्र, कामिनी, प्रेमिका, वियोगिनी, वात्सल्ययुक्त आदि नारी के स्वाभाविक गुणों के साथ-साथ एक क्षत्रियाणी के रूप में नीतिकुशल, पराक्रमी, निडर, दृढ प्रतिज्ञ, वचन का पालन करने वाली आदि क्षत्रियोचित गुणों को भी धारण करती है।

KEYWORDS:

वात्सल्य ऋचीक, गाधि, क्षत्रियोचित, मातृत्व, निर्विवाद, शिरोमणि, वियोगिनी, सुजाता, उदात्त, बुद्धिशालिनी, लोकोपकार।

नायिका का परिचय - महाकवि प्रो. सुधीकान्त भारद्वाज द्वारा अपने परशुरामोदयम् - महाकाव्यम्' में राजा गाधि की पुत्री सत्यवती को नायिका के रूप में चित्रित किया गया है। वह पहले ऋचीक की शिष्या और बाद में पत्नी बनती हैं। महाकाव्य के तृतीय सर्ग में वन में शिकार खेलते समय सत्यवती का मेल ऋचीक के साथ होता है। तब वह ऋचीक को अपना परिचय देते हुए कहती है –

विप्रो यदि त्वं न तदाकुलीनास्मि कान्यकुब्जेश्वरभूमिराज्ञः ।

अहं तु गाधेः तनया द्विजेशास्मि विश्रुता सत्यवती च नाम्ना ।।[1]

अर्थात् - यदि तुम विप्र हो तो मैं भी किसी छोटे कुल की नहीं हूँ। हे ब्राह्मण शिरोमणि! मैं कान्यकुब्ज के महाराज गाधि की पुत्री हूँ और सत्यवती नाम से विख्यात हूँ।

महाकाव्य के द्वादशसर्ग में हैहयवंशीय राजा कृतवीर्य के साथ उसका युद्ध होता है। वहाँ भृगु ऋषि आकर उससे पूछते हैं कि हे बाला ! तुम कौन हो? तब सत्यवती अपना परिचय देते हुए कहती हैं-

सत्यवती समाश्वस्तोवाच योगिन्नहं मुनेः ।

ऋचीकस्यानुगा भार्या भार्गवाणां कुलाङ्गना ।।[2]

अर्थात् - सत्यवती विश्वस्त होकर कहती हैं कि है योगिन् मैं मुनि ऋचीक की अनुगामिनी पत्नी हूँ और भृगु कुल की वधू हूँ।'

राजा के पुत्र सदृश - राजकुमारी सत्यवती राजा गाधि की एकमात्र सन्तान हैं। राजा गाधि ने सत्यवती का लालन-पालन भी पुत्र के समान ही किया है। नारी होते हुए भी सत्यवती राजा के प्रत्येक कार्य में साथ रहती है, यहाँ तक कि विभिन्न युद्धों में भी वीरों की भाँति राजा का सहयोग करती हैं। राजा के अनुसार वह प्रत्येक शस्त्र शास्त्र में प्रवीण होने के साथ-साथ राजकार्य में भी दक्ष हैं। यथा –

सुता ममैकैव मुनीश सन्ततिः सदैव पुत्रेण समा च लालिता ।

कृतश्रमा सर्वविधायुधेषु वे धृता च शिक्षा खलु राजकर्मणः।[3]

अर्थात् - हे मुनीश ! मेरी पुत्री मेरी एकमात्र सन्तान है। यह सदा पुत्र के समान ही पाली गई है। इसने सभी प्रकार के शस्त्रों में अभ्यास किया है और राजकर्म की शिक्षा भी प्राप्त की है।

अद्भुत शारीरिक सौन्दर्य - महाकाव्य के पञ्चम सर्ग में राजा गाधि तपोवन में मुनि से मिलने के लिए आते हैं। तब वह ऋचीक से सत्यवती को शस्त्र-शास्त्रों की विद्या देने के लिए निवेदन करते हैं। अगले दिन ही प्रातःकाल में सत्यवती शिक्षा प्राप्त करने के लिए जब तपोवन में आती हैं तब उनका अद्भुत शारीरिक सौन्दर्य पाठकों के समक्ष इस प्रकार प्रकट होता है –

कृतप्रणामां नतकम्बुकन्धरां विनामिताधोवलयार्धमध्यमाम् ।

स्वपादजिघृक्षुनताग्रबाहुकां सुहंसिनीरूपधरां जगाद सः ।।[4]

अर्थात् - जब उसने ऋचीक ऋषि को प्रणाम किया तो उसकी शङ्ख जैसी गर्दन नीचे झुक गई थी। उसने अपनी कमर की आधी गोलाई को नीचे झुका लिया था। उसने मुनि के पैर पकड़ने की इच्छा से अपनी भुजाओं के अग्रभाग को नीचे झुका लिया था तो उस समय वह हंसिनी के समान लग रही थी ।

महाकाव्य के पष्ठ सर्ग में जब सत्यवती की सखी एवं मंत्री की पुत्री सुजाता सत्यवती के प्रेम का सन्देश लेकर ऋचीक के पास पहुँचती हैं तब ऋचीक सुजाता के सामने सत्यवती के अद्भुत सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कहते हैं कि वह कोमलाङ्गी है वह सौन्दर्ययुक्त गुणवती है। मेरी दृष्टि में वह पहली ऐसी नारी हैं, जिसके दर्शन से मेरे मन में विकार उत्पन्न हुआ है –

सौभाग्यं मे यदि सुवनिता गाधिजन्मा शुभाङ्गी

सौन्दर्याद्यामितगुणवती काङ्क्षते तापसं माम् ।।[5]

दृष्टो सा मे प्रथमवनिता क्षोभनं चापि चित्ते

तामालक्ष्यामुदितमनसा चाप्यकल्पे प्रगाढम् ।।[6]

पराक्रमयुक्ता - कवि प्रो. भारद्वाज द्वारा राजकुमारी को महाकाव्य में पराक्रमयुक्त चित्रित किया गया है। उसकी वीरता और पराक्रम के कारण राजा गाधि राजकुमारी को युद्ध में सदैव अपने समीप रखते हैं, क्योंकि राजा ने उन्हें पुत्र के समान पाला है। वह भी प्रत्येक युद्ध में स्वयं जाती है।

धनुर्वेदविज्ञा सुशस्त्रेषु दक्षा यदा सार्द्धमासीद्धि युद्धेषु वाला।

रिपूणां दलानि प्रपप्लुर्भयार्त्ते यथा वातनीतानि पत्राणि दूरम् ।।[7]

अर्थात् - 'धनुर्वेद और उत्तम शास्त्र में वह राजकुमारी जब युद्धों में उसके साथ होती थी तो शत्रुओं के दल इस प्रकार दूर भाग जाते थे, जैसे वायु के द्वारा दूर ले जाए गए पत्ते।'

उदात्त प्रेमिका - महाकाव्य में सत्यवती उदान प्रेमिका के रूप में प्रस्तुत होती हैं। महाकाव्य

के तृतीय सर्ग में उसका ऋचीक के प्रति प्रेम भाव प्रदर्शित होता है। किन्तु यहाँ पर उसका प्रेमभाव स्पष्ट रूप से न होकर सङ्केतों में होता है। शिकार के प्रसङ्ग में उसका प्रेम बीज रूप में मुनि तक पहुँचता है। सङ्कोच कारण से वह उसे कह नहीं पाती। राजकुमारी अपनी कल्पनाओं में ऋचीक का स्मरण करती रहती हैं। चतुर्थ सर्ग में उसकी प्रेमावस्था को कवि ने इस प्रकार व्यक्त किया है- प्रथम प्रणय भाव के कारण वह अपने पसीने से सराबोर हो गई और ऋचीक के तपते हुए शरीर में (कल्पना में आलिङ्गन के समय) वह इस प्रकार प्रविष्ट हो गई जैसे चिरकाल से तपते हुए ग्रीष्मकाल में भूमि के ऊष्णवल में पहली वर्षा प्रवेश कर जाती है –

आनन्दलोके प्रगता सुदूरं विचारमग्नास्मृतवर्तमाना ।

आकारिता गाधिरवेण भूयो विलज्जिता स्वप्नरता प्रबुद्धा ।।[8]

अर्थात् - ऋचीक के साथ संसर्ग को कल्पना में वह आनन्द लोक में बहुत दूर तक चली गई और विचारों में मग्न होकर वर्तमान को भूल गई। जब राजा गाधि ने उसे बार-बार पुकारा तो स्वप्नों में खोई हुई वह लज्जित हुई चेतना में आई।

वन में जाकर ऋचीक साधना करते हैं और समाधिस्थ हो जाते हैं। दीर्घकाल के पश्चात् मन में व्याकुलता के कारण उनको समाधि भङ्ग होती है, तब उसे पूर्व संस्कारों के द्वारा धीरे-धीरे चेतना होती है और वह सबसे पहले अपनी पत्नी को देखते हैं। ऋचीक धीमी वाणी में दिव्यानुभूति प्राप्त कर कहते हैं कि हे प्रिये तुम्हारे ये केश श्वेत कैसे हो गए? तुम इतनी क्षीण कैसे हो गई? ऐसा सुनकर सत्यवती बहुत प्रसन्न होती हैं।

बहुकाले व्यतीते सा पत्युर्निशम्य भाषणम् ।

जहर्ष मनसा देवी पतिसेवारता चिरात् ।।[9]

क्षत्रिया - कवि द्वारा सत्यवती को महाकाव्य में क्षत्रिय गुणों से सम्पन्न बताया गया है। सत्यवती राजा गाधि को एकमात्र पुत्री हैं। यह बहुत बार राजा के साथ युद्धों में गई है। उसका पालन पुत्र के समान हुआ है। वह ऋचीक के साथ विवाद करते हुए स्पष्ट करती है कि मैं राजा गाधि की पुत्री क्षत्रियधर्म में संलग्न हैं। राजा भी ऋचीक के पास मिलने जाते समय उसके द्वारा किये गये अपराध की क्षमा याचना करते हुए सत्यवती के क्षत्रिय स्वभाव को कहते हैं –

गता च युद्धेषु मया सहाग्रहादनेकवारं नवरेशधारिणी ।

अतः प्रवृत्तिः प्रकृतेर्हि भूयसी विमंशयं क्षत्रियधर्मकर्मसु ।।[10]

अर्थात् - यह मेरे साथ जिद करके पुरुष की वेशभूषा धारण कर अनेक बार युद्धों में गई है। इसलिए निःसंदेह इसके क्षत्रिय धर्म के कार्य में स्वाभाविक रूप से अत्यधिक रूचि है।

विनम्रा - क्षत्रियगुणों से परिपूर्ण होते हुए भी सत्यवती विनम्र दिखाई देती है। जब ऋचीक लक्ष्य को साधते हैं तब पराजित होकर भी ऋचीक के शौर्य से प्रभावित होकर प्रसन्न होती हैं और विनम्रभाव से कहती हैं –

विलास मुनिवाक्यसारात्। विनामितेवार्थगुरुप्रवाक्यैः ।

उवाच देव सहस्व मौर्य महादिङ्ग कपिलङपनेच्छाम् ।।[11]

अर्थात् - वह मुनि के वचनों के भाव से लज्जित हो गई। मानो अर्थ से भारी वाक्यों के द्वारा झुकाई हुई वह बोली- 'हे देव महान्। पर्वत की शिखर को लाँघने की बन्दर की इच्छा के समान मेरी इस मूर्खता को क्षमा करो।'

कुशल वक्त्री सत्यवती महाकाव्य में कुशल वक्त्री के रूप में दिखाई गई हैं। वाणी पर उसका पूर्ण अधिकार है। वह प्रत्युत्पन्नमति युक्त हैं। जब ऋचीक मृग के विषय में कहते हैं कि यह आश्रम का है तब वह तुरन्त कहती हैं कि यह तपोवन प्रान्त के बाहर प्रदेश में घूम रहा था। इसलिए यह मृग तपोवन का नहीं है। है मुनि विलम्ब किये बिना इस मृग को छोड़ दें में विनय से आपको कहती हूँ। राजकुल की परम्परा है कि धनुषवाण के अभ्यास के लिए पशुओं का शिकार किया जाए - इसमें कोई दोष नहीं है –

परम्परा राजकुले परं वै धनुः शराभ्यासविधिक्रियार्थम् ।[12]

स्वयंवर में जब राजा कहते हैं कि पुत्री मन पर आकर अपने मन की अभिलाषा कहो - तब वह लज्जायुक्त स्पष्ट अक्षरों में कोमल चित्तानुराग के साथ कहती है –

जनाति योगी मम चित्तवृत्तिं सम्य मनोज्ञो मनसोऽभिलाषाम् ।

तिरस्कृतः किं तपसां पतेर्वे तज्जन्यरागो ह्यरुणप्रभायाः ।।[13]

अर्थात् - 'योगी मन को जानने वाले हैं। वे मेरे मन की दशा और अभिलाषा को अच्छी तरह जानते हैं। क्या सूर्य के द्वारा हो उत्पन्न की गई उषा की लालिमा (अर्थात् प्रेम) सूर्य से छिपी रहती हैं।'

नीतिकुशला - सत्यवती अपने कथन से नीति को स्पष्ट करती हैं। उसके नीति ज्ञान को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। यद्यपि वह ऋचीक से नीति शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करती है, किन्तु इससे पहले ही वह नीति कुशल थी। इसमें कदापि संशय नहीं किया जा सकता। मृग पर अधिकार प्राप्त करने के प्रसङ्ग में ऋचीक के साथ संवाद करते हुए वह कहती है कि –

न शोभते तापसमार्गवृत्ते द्विजस्य संसारजने प्रसक्तिः ।

मनस्सु यो जीवनमृत्युभेदः स लौकिकानां विषयप्रभावः ।।[14]

अर्थात् - तपस्वियों का मार्ग अपनाने वाले ब्राह्मण को सांसारिक प्राणों में आसक्ति शोभा नहीं देती। मनों में जो जीवन-मृत्यु का भेद हुआ करता है वह तो केवल लौकिक विषयों का प्रभाव है।

स्वाभिमानिनी - सत्यवती स्वाभिमानिनी नारी हैं। महाकाव्य के तृतीय सर्ग में उसका स्वाभिमान हमारे सम्मुख प्रकट होता है। शिकार के समय हिरण दौड़ते हुए ऋचीक की शरण में आता है। ऋऋचीक उसे वह हिरण नहीं देते। तब उसके साथ वार्तालाप में वह कहती है कि यदि आप विप्र हैं तो मैं भी कान्यकुब्जेश्वर भूमिराजा गाधि का पुत्री हूँ। अतः इस निरर्थक विवाद को बंद करो मैं राजपुत्री हूँ और अपने मनोरथ को भङ्ग करने वाले अपमान को में सहन नहीं कर सकती –

अलं विवादैरथवार्थहीन रहं प्रयातास्मि मृगं न हित्वा ।

ममैष कल्पो नृपतेः सुताया मनोरथास्तं न सहेऽपमानम् ।।[15]

बुद्धिशालिनी - सत्यवती के द्वारा बहुत कम समय में ही उसकी तीव्र बुद्धि और गुरु के प्रभाव से न केवल शस्त्र सञ्चालन में अपितु अन्य विद्याओं में भी सिद्धता प्राप्त कर ली जाती है। ऋचीक द्वारा अनेक बार उसकी परीक्षा लेने के बाद संतुष्ट होकर कहा जाता है –

समाप्तविद्या त्वमसीष्टशासने चिरेण ग्राह्यो लघुना श्रमेण वै ।

जनोपकाराय सदा नियोजय प्रशासितं यद्धि मया बरानने ।।[16]

अर्थात् - 'जो शिक्षा तुम चाहती थी वह थोड़े से श्रम से ही पूरी हो गई है। यद्यपि इसे ग्रहण करने में बहुत समय लगता है। है सुन्दरी। मैंने तुम्हें जो शिक्षा दी है उसे लोकोपकार में प्रयोग करना।'

कामिनी - महाकाव्य में सत्यवती की भूमिका कामिनी के रूप में निर्दिष्ट की गई है। वह अपने मन में इच्छा को छिपाकर सचीक को चाहती हैं, किन्तु स्पष्ट रूप से नहीं कहतीं जब उसकी शिक्षा पूर्ण होती है तो ऋचीक उसे अपने अनुशासन से मुक्त कर स्वेच्छानुसार जाने के लिए स्वतन्त्र करते हैं। वह ऋचीक के इस कथन को सुनकर कान्तिरहित हो जाती हैं –

इयेष वक्तुं बहु कामिनी परं जडीबभूवास्यगिरा प्रपीडिता ।

जलार्द्रकाष्ठे ज्वलनोन्मुखानलः सधूमराशिर्बहुशः तमायते ।।[17]

अर्थात् - यह कामिनी बहुत कुछ कहना चाहती थीं, परन्तु उसके मुख की वाणी पीड़ित होकर जड़ हो गई। जल से गीली लकड़ी में जलना चाहती हुई सुलगती हुई अग्नि धूआँ फैलाती है और बहुत अँधेरा कर देती है।

वियोगिनी - सत्यवती का मन वियोग के दुःख के कारण पीड़ित है। वह दुःख से संतप्त थी। कुछ दिनों तक उसने शिक्षा प्राप्त की और अब उसका ऋचीक से वियोग होगा। वह बुद्धि और रूप से सम्पन्न होने पर भी मुनि को प्रभावित नहीं कर पाई है, इस प्रकार वह विचारयुक्त मन से विमूढ़ होकर गति को प्राप्त नहीं करती। राजा गाधि राजकुमारी के प्रशिक्षण के बाद ऋचीक से मिलने के लिए आते हैं। तब राजा कहते हैं कि अब आप पुत्री को शुभाशीष दीजिए। वह ऋचीक को पति के रूप में स्वीकार कर चुकी हैं। इसलिए उसके शुभाशीष पाकर हर्षित नहीं होती। वह अपने मन की बात कहना चाहती है, किन्तु नहीं कहती। यथा –

वियोगभावाद गुरुणार्त्तचेतसा विरक्तिभावाच्च मुनेर्हताशया ।

बभूव वाणी कथने निरक्षरा निरङ्कुरं यीजमिवाताहतम् ।।[18]

अर्थात् - वियोग की भावना के कारण उसका हृदय बहुत भारी तथा दुःखी था। मुनि के वैराग्य भाव के कारण वह हताश हो गई थी। इसलिए उसकी वाणी इस प्रकार अक्षररहित हो गई जैसे

गर्मी में तपे हुए बीज में अङ्कुर नहीं निकलता।

वात्सल्ययुक्ता - मनुष्य से भिन्न प्राणियों के पुत्र भी स्वाभाविक रूप से मन को भाते हैं। उनकी बाल लीलाएँ देखकर मन प्रसन्न होता है। उनके दर्शन से किसी भी नारी के मन में पुत्र प्राप्ति की इच्छा जाग्रत होती है। इसी प्रकार सत्यवती के मन में भी पुत्र उत्पन्न करने की इच्छा जाग्रत होती है और यह एक रात को वह ऋचीक से कहती है कि आप धर्म से सम्पूर्ण जीवन को जानते हैं। नारियों का स्वाभाविक धर्म संतानोत्पत्ति होता है- ऐसा सभी लोग मानते हैं। यदि नारी जननी नहीं होगी तो उसका जीवन व्यर्थ है। वह ऋचीक से अपनी सन्तान की कामना करते हुए कहती हैं –

सुतं काक्षे ब्रह्मोपेतगुणधृतं भर्तृसदृशं

भवद्रूपं यस्मिन् सततमथ पश्येम् प्रसारितम्।

न मन्ये दुर्लभ्यं भवदनुगृहीता बहुफला

सतां संसर्गः किं न फलति जगत्यां सुकृतजैः ॥[19]

अर्थात् - मैं ऐसे पुत्र की कामना करती हूँ कि जिसमें पति के समान ब्राह्मण के गुण हों ताकि उसमें में सदैव आपका ही प्रसारित रूप देखूं। आपसे अनुगृहीत होकर में स्वयं को अनेक फलों से युक्त मानती हुई अपने लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं मानती हूँ। पुण्य कर्मों के फलस्वरूप प्राप्त हुए पुरुषों के संसर्ग से जगत् में कौन-सा फल प्राप्त नहीं हो सकता।

इस प्रकार कवि प्रो. भारद्वाज द्वारा महाकाव्य में सत्यवती को विभिन्न नार्यगुणों से युक्त प्रस्तुत करते हुए उन्हें नायिका के पद पर प्रतिस्थापित किया है।

निष्कर्ष - महाकावि प्रो. सुभीकान्त भारद्वाज द्वारा 'परशुरामोदयम् महाकाव्यम्' की नायिका के रूप में सत्यवती का चित्रण बड़ी सूक्ष्मता के साथ उनके मानवीय और नार्यगुणों के प्रकाश में उदारता के साथ किया गया है। सत्यवती राजा गाधि की एकमात्र सन्तान होने के कारण उनके पुत्र के समान है। वह अत्यन्त रूपवती होने के साथ-साथ वाक् कौशल, बुद्धिसम्मत, नीति-निपुण, शौर्य शालिनी, प्रेमासक्त वियोगिनी, मातृत्वकांक्षिणी आदि विभिन्न मानवीय नार्य एवं क्षत्रियोचित गुणों से विभूषित होकर निर्विवाद रूप से महाकाव्य में आदर्श नायिका के रूप में प्रतिष्ठित होती हैं।

REFERENCES

1. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 3/35
2. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 12/149
3. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 5/40
4. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 5/78
5. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 6/61
6. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 6/62
7. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 11/3
8. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 4/8
9. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 17/35
10. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 5/41
11. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 3/67
12. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 3/37
13. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 7/102
14. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 3/29
15. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 3/38
16. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 5/90
17. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 5/93
18. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 5/114
19. ' परशुरामोदयम् महाकाव्यम् ' – 10/36